• श्रीश्रीगुरुगौराङ्गौ जयतः •

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे ।

धर्मः स्वनुष्ठितः पुंसां विष्वक्सेन कथासु यः ।

नोत्पादयेद् यदि रतिं श्रम एव हि केवलम् ।

अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मासुप्रसीदति ।

श्रीमद्भागवत-पत्रिका

सर्वोत्कृष्ट धर्म है वह जो आत्मा को आनन्द प्रदायक ।
भक्ति अधोक्षज की अहैतुकी विघ्नशून्य अति मंगलदायक ॥

सब धर्मों का श्रेष्ठ रीति से पालन करते जीव निरन्तर ।
किन्तु हरि-कथा-प्रीति न हो श्रम व्यर्थ सभी केवल बंधनकर ।

वर्ष १४ | गौराब्द ४८३, मास—त्रिविक्रम १२, वार—अनिरुद्ध बुधवार, ३१ वैशाख, सम्वत् २०२६, १४ मई १९६९ | संख्या १२

श्रीकृष्णस्य लीलामृतनामकं दशनामस्तोत्रम्

(श्रीश्रीलरूप गोस्वामिना विरचितम्)

राधिकाहृदयोन्मादिवंशीक्वाणमधुच्छटः ।

राधापरिमलोद्गारगरिमाक्षिप्तमानसः ॥१॥

१. जो वंशीध्वनिरूपी मधु छटासे श्रीमती राधिकाके चित्तको अत्यन्त उन्मादित कर देते हैं, २. श्रीमती राधिकाजीके शरीरके सुन्दर सुगन्धसे जिनका मन आकृष्ट हो जाता है ॥१॥

कम्ररराधामनोमीनबड़िशीकृतविभ्रमः ।

प्रेमगर्वान्धगान्धर्वाकिलकिंचितरञ्जितः ॥२॥

३. जिन्होंने श्रीमती राधिकाजीके चित्तरूप मीनको आकृष्ट करनेके लिए अपने विलासरूप बड़िश (मछलीको पकड़नेका यंत्र) का आश्रय ग्रहण किया है, ४. जो प्रेम-गर्वसे अत्यन्त मदमत्त श्रीमती राधिकाके किलकिञ्चित (नायक-नायिकाके मिलनके समयमें नायिकाके गर्व, अभिलाष,

रोदन, ईषत् हास्य, असूया, भय और क्रोध—हर्षके कारण इन सात भावोंका जो एक साथ उदय होता है, उसे ही किलकिञ्चित कहा जाता है।) भावके द्वारा अत्यन्त आनन्द प्राप्त करते हैं ॥२॥

ललितावश्यधीराधामानाभासवशीकृतः ।
राधावक्रोक्तिपीयूषमाधुर्यभरलम्पटः ॥३॥

५. अपनी प्राणप्रियतमा सखी ललिताकी वशीभूता श्रीमती राधिकाके मानके आभास मात्रसे भी जो अत्यन्त कातर हो जाते हैं, ६. जो श्रीमती राधिकाकी वक्रोक्तिरूप अमृतका माधुर्य आस्वादन करनेके लिए अत्यन्त लालायित हैं ॥३॥

मुखेन्दुचन्द्रिकोद्गीर्णराधिकारागसागरः ।
वृषभानुसुताकण्ठहारिहारहरिन्मणिः ॥४॥

७. जिनकी मुखचन्द्र-चन्द्रिकाके द्वारा श्रीमती राधिकाका अनुराग सागर उमड़ पड़ता है, ८. जो वृषभानुनन्दिनी श्रीमती राधिकाके गलेमें शोभायमान सुन्दर हारके मरकत मणि स्वरूप हैं ॥४॥

फुल्लराधाकमलिनीमुखाम्बुजमधुव्रतः ।
राधिकाकुचकस्तूरीपत्रस्फुरदुरस्थलः ॥५॥

९. जो श्रीमती राधिकारूपी कमलिनीके प्रफुल्ल मुखकमलके लिए भ्रमर स्वरूप हैं और १०. जिनका वक्षःस्थल श्रीमती राधिकाको आलिङ्गन करनेके कारण उनके वक्षःस्थलमें स्थित कस्तूरीपत्रके चिह्नद्वारा चिह्नित है ॥५॥

इति गोकुलभूपालसूनुलीलामनोहरम् ।
यः पठेन्नामदशकं सोऽस्य वल्लभतां व्रजेत् ॥६॥

गोकुलके महाराजा श्रीनन्द महाराजके पुत्र श्रीकृष्णके दस नामोंसे युक्त लीलामय इस मनोहर स्तोत्रका जो व्यक्ति अत्यन्त प्रीतिपूर्वक पाठ करते हैं, वे शीघ्र ही श्रीकृष्णके अत्यन्त प्रियपात्र बन जाते हैं ॥६॥

॥ इति श्रीलीलामृताख्यं स्तोत्रं समाप्तम् ॥

अपनी कुछ बातें

स्वयं भगवान श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुके द्वारा उपदिष्ट वाक्य ही उनका श्रीअङ्ग है, समय-समय पर उनकी वाणीके प्रचार करनेवाले महापुरुष ही उनके उपाङ्ग हैं, शिक्षा ही उनका अस्त्र है और श्रीचैतन्य-वाणीके आचरणकारी हरि भक्त लोग ही उनके पार्षद हैं। इसलिए उनके आवरण (पार्षदादि) के साथ श्रीचैतन्य महाप्रभुकी पूजाके लिए गौड़ीय वैष्णवों और उनके प्राण-सर्वस्व श्रीश्रीगौरसुन्दरकी आराधना करते हुए भारतके देश-विदेशोंमें गमन करनेवाले प्रचारकोंसे अपनी कुछ बातें निवेदन कर रहा हूँ।

हमारे परमाराध्य देव श्रीचैतन्य महाप्रभुजी ने हमें जो शिक्षाएँ दी हैं, उनमेंसे कुछ महा-वाक्य स्वरूप हैं—१) तृणादपि सुनीच बनना, २) पेड़ की अपेक्षा भी सहिष्णु बनना, ३) अमानी रहना (अपने लिए मान-सम्मानादि की आशा न करना), और ४) मानद (दूसरों को मान देते हुए) सर्वदा हरिकीर्त्तन करना। इन महावाक्योंका कायमनोवाक्यसे पालन करना ही जीवोंका परम धर्म है। मेरे श्रीगुरु-पादपद्मने इन चार महावाक्योंका जीवन्त मूर्त्ति प्रकाश कर मुझे अपने सुशीतल पादपद्मोंमें आकर्षण किया है। मैं भी अपने बान्धवोंको इस अव्यर्थ प्रणालीका अनुसरण कर जगतके सभी जीवोंको वास्तव सत्यके आधारस्वरूप भगवत् पादपद्मोंमें आकर्षण करनेका परामर्श प्रदान कर रहा हूँ।

त्रिदण्डिकुल-चूड़ामणि श्रील प्रबोधानन्द सरस्वतीजी कहते हैं—"दन्ते निधाय तृणकं पदयोर्निपत्य, कृत्वा च काकुशतमेतदहं ब्रवीमि। हे साधवः सकलमेव विहाय दूरात्, चैतन्य-चन्द्रचरणे कुरुतानुरागम्॥" इस उपदेश द्वारा इन्होंने त्रिदण्डि संन्यासियोंको जिस प्रकारकी प्रचार-प्रणालीकी शिक्षा दी है, मैं भी महाजनों का पदानुसरण करते हुए अपने बन्धुओंको उसी प्रकारकी प्रचार-प्रणाली अनुसरण करने का निवेदन कर रहा हूँ। श्रीश्रीकृष्णचैतन्य महाप्रभुजी जगतके सभी शिक्षकोंके भी परम शिक्षक हैं और वे सर्वश्रेष्ठतम बुद्धिमत्ताके मूर्त्तिमान आदर्श हैं। उन्होंने अपने शिक्षाष्टकमें जिस 'चेतोदर्पणमार्जन' की बात बतलाई है, हमें उसीका सर्वदा बारम्बार कीर्त्तन करना चाहिए। हम लोग श्रौतवाणीके वाहकमात्र हैं। हमारे लिए अपनी दांभिकता दिखलानेका या वृथा अहंकार करनेका समय लेशमात्र भी नहीं है—इस बातको सर्वदा मनमें रखनी चाहिए।

हम लोग जगत्के सभी व्यक्तियोंको उनके प्राप्य यथायोग्य सम्मान और अधिकार प्रदान

करनेके लिए कदापि कुण्ठित न होंगे। हम लोग सभीके निकट ही कृष्णभक्तिका वर प्रार्थना करेंगे। जगतके जितने प्रकारके भी प्रतिकूल या अनुकूल व्यक्ति हमारे सम्मुख उपस्थित क्यों न हो, हम सभीको यथायोग्य सम्मान प्रदान कर हमारे अभीष्टदेवकी प्रेम-सेवा करते रहेंगे। हमारे परम आदर्श व्रजवासिनी गोपियोंका सर्वश्रेष्ठ मंत्र यही है—

कात्यायनि महामाये महायोगिन्यधीश्वरि।
नन्दगोपसुतं देवि पतिं मे कुरु ते नमः॥
(भा० १०।२२।४)

हे महामाये! हे महायोगिनि! हे अधीश्वरी कात्यायनी देवि! तुम कृपा कर नन्द महाराजके पुत्र श्रीकृष्णको मेरा पति बनाओ, मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ।

परमहंसकुल चूड़ामणि श्रीश्रीलरघुनाथदास गोस्वामी कहते हैं—

वृन्दावनावनिपते! जय सोम! सोममौले!
सनक-सनन्दन-सनातन-नारदेड्य।
गोपीश्वर! व्रजविलासि-युगांघ्रि-पद्मे
प्रेम प्रयच्छ निरुपाधि नमो नमस्ते॥

हे वृन्दावन-भूमिके रक्षक! हे ईश्वर! हे चन्द्रमौले! हे सनक-सनन्दन-सनातन नारदादि के पूज्य! हे गोपीश्वर! मैं बारम्बार आपके श्रीचरणोंमें प्रणाम करता हुआ आपसे यही वर प्रार्थना कर रहा हूँ कि मुझे कृपा कर आप व्रजविलासी श्रीकृष्णके युगल-चरणारविन्दमें निरुपाधिक प्रेम प्रदान करें।

हम पृथ्वीके सर्वत्र विराजमान विभिन्न व्यक्तियोंके निकट हरिकीर्त्तन करनेके लिए उपस्थित होते हैं। उस समय हमें बहुत कुछ देखना और सुनना चाहिए और शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। मेरे गुरुपादपद्मोंमें जगतके ये सभी विषय गौणरूपसे उनकी सेवाके लिए वर्त्तमान हैं—इस बातका सर्वदा ध्यान रखना चाहिए। यदि जागतिक अभिज्ञता और जागतिक शिक्षा अपनी सर्वश्रेष्ठ अवस्थामें मेरे गुरुपादपद्मोंकी सेवाके लिए सर्वदा उत्कण्ठित होकर उनके पीछे-पीछे भ्रमण करें, तब ही उनकी सार्थकता है। अन्यथा वे माया-मरीचिकाके आधार मात्र हैं—यह हमें सर्वदा याद रखना चाहिए।

मेरे जो सभी बन्धु लोग श्रीश्रीचैतन्यवाणीके प्रचारके लिए पाश्चात्य देशोंमें प्रस्थान करनेकी तैयारी कर रहे हैं, उन्हें मैं गौड़ीय गगनमें अङ्कित मेरे प्रभु श्रीश्रील रूप गोस्वामीपादके दो वचनोंका पुनः स्मरण करा देना चाहता हूँ—

अनासक्तस्य विषयान् यथार्हमुपयुंजतः।
निर्बन्धः कृष्णसम्बन्धे युक्तं वैराग्यमुच्यते॥१॥
प्रापंचिकतया बुद्धया हरिसम्बन्धिवस्तुनः।
मुमुक्षुभिः परित्यागो वैराग्यं फल्गु कथ्यते॥२॥

कृष्णसे दृढ़ सम्बन्ध ज्ञान युक्त होकर सभी विषयोंको कृष्ण सम्बन्धी जानकर आसक्तिरहित होकर विषयोंको अपनी आवश्यकतानुसार ग्रहण करना ही युक्त वैराग्य है। हरि

सम्बन्धी वस्तुओंको प्रापंचिक या प्राकृत समझकर मुमुक्षु (मुक्तिकामी) द्वारा उनका त्याग करना ही फल्गु वैराग्य है।

श्रीश्रीलसनातन गोस्वामीपादने "जयति जयति नामानन्दं मुरारे" आदि श्लोकों द्वारा वेदान्त-दर्शनके फलपादके "अनावृत्ति शब्दात्, अनावृत्ति शब्दात्" सूत्रकी व्याख्या की है। मेरे बन्धुओंसे मेरा यही सविनय अनुरोध है कि वे सभीको मान देते हुए सर्वदा इसी व्याख्याका बारम्बार कीर्त्तन करें।

आप लोग जिस श्रेणीके व्यक्तियोंके निकट हरिकीर्त्तन प्रचार करनेके लिए जा रहे हैं, वे लोग जागतिक सभी विषयोंमें निपुणताकी उन्नततम शिखरमें वर्त्तमान हैं। वे लोग विचारपरायण, सौजन्ययुक्त, बहुतसे विषयोंमें श्रेष्ठ और गौरवान्वित हैं। इसलिए उन लोगों के निकट सद्युक्ति और सद्विचारका निष्कपट रूपसे प्रदर्शन करने पर वे लोग श्रौतवाणीके श्रेष्ठ ग्राहक होंगे, इस विषयमें आप लोगोंको दृढ़ आशा रखनी चाहिए। यदि हम सहिष्णुता धर्मका अवलम्बन करते हुए अकैतव हरिकीर्त्तन का स्वच्छन्द रूपसे प्रचार करें, तो उसे सुबुद्धिमान जातिके व्यक्ति निश्चय ही अपना कण्ठभूषण बनायेंगे।

हम लोग प्रतियोगिता या प्रतिद्वन्द्विता करनेके उद्देश्यसे इस प्रचार कार्यमें प्रवृत्त नहीं हुए हैं। यह बात सर्वदा हमारे स्मरण रखने योग्य है। हम लोग केवल वास्तवसत्यका भार अपने माथेपर वहन करते हुए सत्यानुसन्धान तात्पर्ययुक्त व्यक्तियोंके द्वार-द्वारपर गमन करेंगे। जागतिक लोगोंके आदर या अनादरसे मोहित हो जाना हमारे लिए अनुचित है। वे सभी वस्तुएँ हमारी प्रार्थनीय वस्तुएँ नहीं हैं। हम लोग श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणीके कीर्त्तनकारी त्रिदण्डि भिक्षुक मात्र हैं। श्रीहरि-गुरु वैष्णव सेवासुखको छोड़ कर हमारे लिए और कोई भी अधिकतर उन्नत स्पृहनीय वस्तु नहीं है।

हम यंत्री नहीं, बल्कि यंत्रमात्र हैं। यह बात हमें सर्वदा स्मरण रखना चाहिए। त्रिदण्डि भिक्षुक लोग जीवन्त मृदङ्ग हैं। श्रीश्रीगुरुपादपद्मके नीचे हम सर्वदा नतमस्तक हैं। श्रीगुरु-वैष्णवोंका सर्वदा-आनुगत्य और श्रौतवाणीको हमारा ध्रुव लक्ष्य समझते हुए हमें भगवान् श्रीश्रीगौरसुन्दरकी आदेश-वाणी की विजय-पताका लेकर परिव्राजक धर्मका पालन करना होगा।

हमें सर्वदा यह बात याद रखना चाहिए कि हम लोगोंने एकमात्र श्रीगुरु–गौराङ्गके मनोऽभिष्ट प्रचारके लिए ही यह परिव्राजक-व्रत धारण किया है। सर्वदा श्रीगुरुपादपद्मके आनुगत्यमें रहकर कीर्त्तन-व्रतमें दीक्षित रहने पर ही वृथा घूमनेकी लालसा या अन्याभिलाष की कोई भी प्रच्छन्न मूर्त्ति हमारे हृदयमें किसी भी प्रकारसे ताण्डव–नृत्य कर नहीं सकती।

श्रीगौरनाम, श्रीगौरधाम और श्रीगौरकाम

का सेवा-व्रत ही हमारा नित्य धर्म है। हम लोग त्रिदण्डि भिक्षुक हैं; अतएव विश्वमें सर्वत्र श्रीमठका प्रकाश-विग्रह स्थापन करनेके लिए माधुकरी भिक्षा हो हमारा एकमात्र अवलम्बन है। हम लोग भोगी या त्यागी नहीं हैं। हम लोग अप्राकृत परमहंसकुलके वैष्णवोंका पादुका-वहन करनेकी आकांक्षायुक्त हैं। इसे ही हम सर्वोच्च आकांक्षा जानते हैं।

हम तृणादपि सुनीच होकर सभी व्यक्तियों को यह बतलायेंगे कि विकृत प्रतिफलित माया राज्यके स्वतंत्रताधिकारकी अपेक्षा अप्राकृत वास्तव सत्यके ऊपर सम्पूर्ण निर्भरता ही स्वाधीनताकी सर्वोत्तमा अवस्था है। दाँतोंमें तिनका दबाकर हम लोग सभी व्यक्तियोंके निकट स्वाधीनताकी पताका फहरायेंगे। "रक्षिष्यतीति विश्वासो"—श्रीरूपानुमोदित शरणागतिकी इस वाणीको हमारा मूलमंत्र बनाकर हम लोग सर्वदा हरिकीर्त्तनमें नियुक्त रहेंगे।

—जगद्गुरु ॐविष्णुपाद श्रील सरस्वती ठाकुर

धन्य कलि धन्य है

अधमन के हित आये गोरा, पापिनके हित आये।
दीनन के हित आये गोरा, पतितन के हित आये॥
छल-छल दोऊ नयना बरसे, प्रगट विरह हरि गाये।
दोऊ भुजा उठाय करसें, दीन जनहिं उर लाये॥
जिन दर्शन को देवा तरसें, बार-बार सिर नाये।
ऐसे हरि प्रगटे भूतल पे, मूरख जान न पाये॥
जगाई मधाई पतित जुधारे, यवन अधम अपनाये।
बन के पशुन कराये कीर्त्तन, बाघन को नचवाये॥
राधा नाम धाम प्रगटाये, अपनो रस लुटवाये।
धन्य कलि धन्य है 'बिरही' अद्भुत लीला गाये॥

प्रश्नोत्तर

(श्रद्धा)

१—पारमार्थिक श्रद्धाके उदय होनेपर क्या प्राप्त होता है ?

"तया देशिक पादाश्रयः। अर्थात् पारमार्थिक श्रद्धाके उदय होने पर गुरु-पादाश्रयकी प्राप्ति होती है।"

—आ सू. ५६

२—श्रद्धा क्या वस्तु है ? श्रद्धा और शरणागतिमें क्या पार्थक्य है ?

"पूर्व पूर्व जन्मोंकी सुकृतिके बलसे साधुओं के मुखसे हरिकथा सुननेके पश्चात् भगवान हरिके विषयमें जो दृढ़ विश्वास उत्पन्न होता है, उसे ही 'श्रद्धा' कहते हैं। श्रद्धाके उदय होने के कुछ समय पश्चात् ही शरणापत्तिका उदय होता है। श्रद्धा और शरणागति प्रायः एक ही तत्त्व हैं।"

—जै. ध. २० वाँ अ.

३—श्रद्धा किसे कहते हैं ?

"ज्ञान, श्री और कर्म—ये तीनों प्रयोजन-सिद्धिके उपाय नहीं हैं, भक्ति ही एकमात्र विशुद्ध उपाय है—इस प्रकारके शास्त्र-विश्वास के साथ अनन्या भक्तिके प्रति जो चित्तावृत्ति देखी जाती है, उसीका नाम 'श्रद्धा' है।"

—'श्रद्धा और शरणापत्ति' स. तो ४।६

४—श्रद्धोदयका क्या लक्षण है ?

"शास्त्रार्थ-विश्वासका नाम श्रद्धा है। शास्त्रार्थ यही है कि श्रीकृष्णके शरणागत न होने पर जीवके लिए भय उपस्थित होता है, उनके शरणागत होने पर ऐसा भय और नहीं होता। अतएव श्रद्धाके उदय होनेके साथ-साथ शरणापत्ति लक्षणमें उसे देखा जाता है।"

—'श्रद्धा और शरणापत्ति' स. तो. ४।६

५—किनसे कृष्ण प्रसन्न होते हैं ?

"केवल दीक्षादि ग्रहण कर भक्तिके अङ्गों का पालन करनेसे ही कृष्ण प्रसन्न होते हैं, ऐसी बात नहीं; अनन्य भक्तिके प्रति जिनकी अनन्य श्रद्धा है, उनसे ही कृष्ण पूर्णरूपसे प्रसन्न होते हैं।"

—'भक्तिके प्रति अपराध' स. तो. ८।१०

६—कब तक भक्तिकी संभावना नहीं है ?

"कृष्णैकशरणको छोड़कर दूसरे सद्गुण रहने पर भी जब तक भक्तिके प्रति दृढ़ श्रद्धा न हो, तब तक भक्ति नहीं हो सकती।"

—'सद्गुण और भक्ति' स. तो. ५।१

७—श्रद्धा कितने प्रकारकी है ? वे क्या-क्या अधिकार उत्पन्न करते हैं ?

"श्रद्धा दो प्रकारकी है—(१) वैधी और (२) रागमयी या लोभमयी। जिस प्रकार वैधी श्रद्धा वैधी भक्तिमें अधिकार प्रदान करती है, उसी प्रकार लोभमयी श्रद्धा रागात्मिका भक्ति में अधिकार प्रदान करती है।"

—जै. ध. २१ वाँ आ.

८—किन्हें श्रद्धा नहीं है ?

"जो सुकृतिरहित हैं, उनमें श्रद्धा नहीं होती। अधिक कहने पर भी वे किसी प्रकारसे समझ न सकेंगे।"

—'संगत्याग' स. तो. ११।११

९—कौनसे व्यक्ति आचार्योंके उपदेशोंके मर्मको अनायास ही समझ सकते हैं ?

"जिन व्यक्तियोंमें सुकृतिकेके द्वारा भक्ति प्रति श्रद्धा उदित हुई है, कृष्णकी कृपासे उन लोगोंमें थोड़े बहुत परिमाणमें बुद्धियोगका उदय होता है। उसी बुद्धियोगके द्वारा वे लोग आचार्योंके उपदेशोंके मर्मको अनायास ही समझ सकते हैं।"

—'संगत्याग' स तो. ११।११

१०—कृष्णकीर्त्तन लिये एकमात्र योग्यता क्या है ?

"कृष्णसंकीर्त्तनके लिए श्रद्धा ही एकमात्र योग्यता है, उसके लिये और कोई योग्यताकी आवश्यकता नहीं है।"

—'नामग्रहण विचार' ह. चि.

११—श्रद्धा क्या भक्तिका अङ्ग नहीं है ?

"श्रद्धा भक्तिका अङ्ग नहीं है, किन्तु अनन्य भक्तिके अधिकारी व्यक्तिके कर्माधिकार को निवारण करनेवाली वस्तु-विशेषण मात्र है।"

—'श्रद्धा और शरणागति' स. तो. ४।९

१२—निर्गुण-उद्देशिनी श्रद्धा या भक्ति-लताबीज क्या है ?

"साधुसंगके द्वारा क्रमशः यह श्रद्धा ही बढ़ती जाती है और श्रद्धा-वृद्धिके साथ व्याकुलता भी बढ़ जाती है। उस समय जीव यही चेष्टा करता है कि जिस किसी उपायसे भगवानके चरणारविन्दोंकी प्राप्ति हो। तब वह सबसे पहले यह देख पाता है कि वह अनर्थों द्वारा अत्यन्त जर्जरित है और उसका नित्य स्वभाव सुप्त है। उस समय वह किसी विगत-अनर्थ, जाग्रत-स्वभाव सम्पन्न शुद्ध वैष्णवका पदाश्रय करते हुए एकनिष्ठताके साथ भजन-कार्यमें प्रवृत्त होता है। श्रद्धाकी इसी अवस्था का नाम ही दृढ़ या निर्गुण-उद्देशिनी श्रद्धा है। यही 'भक्तिलताबीज' है।"

—'श्रद्धा', स. तो. ९।५

१३—भक्तसेवाका परित्याग कर जो श्रद्धा देखी जाती है, वह क्या वास्तविक श्रद्धा है ?

"अर्चायामेव हरये यः पूजां श्रद्धायेहते।—(भा ११।२।४७) श्लोकमें जो 'श्रद्धा' शब्द है, वह श्रद्धाभास मात्र है; क्योंकि भगवद्-भक्तका परित्याग कर कृष्ण-पूजामें जो श्रद्धा है, वह वास्तविक श्रद्धाकी छाया या प्रतिबिम्ब है। वह केवल परम्परागत लौकिक श्रद्धामात्र है, अनन्यभक्तिके प्रति अप्राकृत श्रद्धा नहीं है। उस भक्तघाभासकी श्रद्धा और पूजा प्राकृत है।"

—जै. ध. २५ वाँ अ.

—जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिविनोद ठाकुर

सम्बन्ध

प्राणीमात्र आनन्द चाहता है । जन्मसे लेकर मृत्यु तक जीवकी आनन्द-प्राप्तिकी आशा शान्त नहीं होती । इस आनन्द-प्राप्तिकी इच्छा की पूर्तिके लिये वह दूसरोंका सहारा ढूँढ़ता है। यह सहारा जड़ीय पदार्थोंका भी हो सकता है या जड़ सम्बन्धयुक्त चेतन पदार्थोंका । यहाँ पर जड़ सम्बन्धयुक्त चेतन पदार्थोंसे तात्पर्य भौतिक शरीरधारी मायाबद्ध जीवोंसे है ।

जीव मर्त्यलोकमें जन्म ग्रहण करने पर माता-पितासे पुत्र या पुत्रीका सम्बन्ध जोड़ लेता है । अपनेसे पहले पैदा हुए मातृगर्भजात सन्तानोंको भाई-बहिन मानने लगता है । खेल-कूद या विद्या-अध्ययनके समय साथ-साथ खेलनेवाले या पढ़नेवाले बालकोंसे मैत्रीका सम्बन्ध जोड़ लेता है । यौवन अवस्थाको प्राप्त कर किसी स्त्री या पुरुषसे विवाह कर पति या पत्नीका नाता स्थापित कर लेता है । इन सब सम्बन्धोंके पीछे एक ही लालसा वर्त्तमान है—वह है आनन्द की इच्छा या सुखका अनुसन्धान ।

यह सम्बन्ध-स्थापन कार्य जागतिक मर्त्य-शील प्राणियों तक ही सीमित नहीं है। वह सांसारिक समस्त आनन्द प्रदान करनेवाली समझी जानेवाली सभी वस्तुओंसे अपनत्वका सम्बन्ध स्थापित कर आनन्द प्राप्त करनेका भरसक प्रयास करता रहता है ।

इस प्रकार जीव जगतमें जन्म ग्रहण करने की तिथिसे लेकर मृत्यु तक सम्बन्ध बनाता रहता है । उसका सम्पूर्ण जीवन सम्बन्ध बनानेमें ही व्यतीत हो जाता है, तथापि आनन्द मिल नहीं पाता ।

जीव जिन सम्बन्धोंकी कल्पना आनन्द या सुख प्राप्त करनेकी इच्छासे करता है, उनसे आनन्द या सुख प्राप्त न होकर उसके विपरीत दुःख ही दुःख प्राप्त होता है । एक शिशुके उत्पन्न होने पर पिताको पिता होनेका सुख मिलता है । किन्तु उसीके मर जाने पर या उद्दण्ड निकलने पर उसे महान् शोककी प्राप्ति होती है । इसी प्रकार भाई-बहिनों या मित्रोंके मर जाने पर अथवा किसी प्रकार धोखा दे देने पर उसे काफी शोक और दुःखकी प्राप्ति होती है । इसी प्रकार यदि अपनी प्रिय पत्नी झगड़ालु या व्यभिचारिणी निकल जाय अथवा वह अकालमें ही मृत्युके मुखमें पतित हो जाय, तो उसे असीम दुःख प्राप्त होता है ।

इतना सब होने पर भी जीव बारम्बार नये-नये सम्बन्ध स्थापित करनेकी चेष्टा करता रहता है । जागतिक व्यक्ति इन नये-नये सम्बन्धोंको प्राकृतिक परिवर्त्तन का नाम देकर स्वयं अपने आपको धोखा देते रहते हैं । उनका कहना है कि प्रकृति एकरस या समरस नहीं है । वह तो परिवर्त्तन होती रहती है । इसीलिए

मनुष्य भी चिरकाल तक एक ही स्थितिमें रह नहीं सकता । अतएव उसमें परस्पर संघर्ष होकर वह नवीन स्थितिको ग्रहण करता है। यह क्रम उसका मृत्यु तक बराबर चलता रहता है।

ये सभी सम्बन्ध अपने आपको धोखा देनेके अतिरिक्त और कुछ नहीं है । जीव चेतन पदार्थ है। वह नित्य है । उसका अपना एक नित्य रस अथवा भाव या धर्म रहता है। उसे वह माया कवलित होकर भूल जाता है। उसी को ढूँढ़नेके लिए वह विश्वके नाशवान शरीर धारण करनेवाले प्राणियों या पदार्थोंसे सम्बन्ध स्थापित करता रहता है । किन्तु वह भ्रमवश उन्हें अपना समझकर उनके प्रति मोहित हो जाता है। यह बात विचारणीय है कि एक नित्य चेतन पदार्थको दूसरा नित्य आनन्दमय चेतन पदार्थ ही आनन्द दे सकता है—अनित्य पदार्थ नहीं। अनित्य पदार्थोंसे सम्बन्ध को तोड़कर उन्हें दूसरी ओर बदलना ही पड़ता है क्योंकि उनका अस्तित्व अनित्य है।

विश्वमें दो प्रकारके चेतन तत्त्व हैं—१) बृहत् चेतन या पूर्ण चेतन अथवा भगवान और (२) अणु चेतन या जीव। जीवका भगवानसे एक नित्य सम्बन्ध है। भगवान पूर्ण सच्चिदानन्दमय हैं और जीव अणु सच्चिदानन्द है। किन्तु भगवान प्रभु हैं, मायाके अधीश्वर हैं तथा सर्व शक्तिमान हैं। जीव दास है, मायाके वशीभूत है और निःशक्तिक है। अतएव भगवानसे सम्बन्धयुक्त होने पर ही जीवका अखण्ड, नित्य और पूर्ण आनन्दकी प्राप्ति हो सकती है। भगवानसे जीवका कई प्रकारसे सम्बन्ध हो सकता है। (१) पुत्र—माता या पिताका सम्बन्ध (२) सखा-सखाका सम्बन्ध (३) प्रभु–दासका सम्बन्ध और (४) प्रियतम–प्रिया का सम्बन्ध। प्रत्येक जीवका भगवानसे उपर्युक्त सम्बन्धोंमेंसे कोई न कोई सम्बन्ध अवश्य रहता है जो उसका स्वाभाविक नित्य सम्बन्ध है । उसी सम्बन्ध-ज्ञानकी प्राप्तिके लिये जीवको सर्वदा प्रयत्न करते रहना चाहिए। प्रारम्भिक अवस्थामें स्वामी-सेवकका सम्बन्ध उदित होता है। क्रमशः साधन भजन करते-करते उसके समस्त प्रकारके अनर्थोंका समूल नाश हो जाता है। उस समय उसका चित्त शुद्ध हो जाता है। उस निर्मल हृदयमें स्वतः ही जीवका स्वरूपगत सम्बन्ध उदय हो जाता है । उसी सम्बन्धके माध्यमसे ही वह नित्य प्रेमानन्दको प्राप्त करनेमें सफल होता है।

— सत्यपाल गोयल, एम. ए.

कृपाकी कोर कीजै कृष्ण प्यारे

कृपाकी कोर कीजै कृष्ण प्यारे।
बसो कीरत-कुँवरि सङ्ग मन हमारे॥

यशोदा - नन्द - सुत वारे कन्हैया
लडैते लाल हलधरजीके भैया।
श्रीगोपाल गोविन्द ब्रज बसैया
सदा गो-गोप-गोपी प्राण प्यारे॥१॥
मुकुट माथे मुरलिका सोहती कर
उँनीदे नैन-कजरारे अरुण वर।
हलीन बेसर अधरतट सोहे रुचिकर
झलक कुण्डल कपोलनके सहारे॥२॥
धरें पट पीत श्यामल गात सुन्दर
लकुटफेंटा कसें कटि-तीर गिरिधर।
पगनमें पैंजनीके नाद मनोहर
बसे यह छबि मनोहर मन हमारे॥३॥
कुटिल अलकावली मुख पर सुहावै
मनोहर बंक चितवन चित चुरावै।
हलीन बेसरको मोती हिय समावै
हरत धीरज-धरम-मन मुकुटवारे॥४॥
सुन्दर बन पूतना गोकुलमें आई
बदनमें विष लगाये मुस्कराई।
पिया ज्यों दूध मुखभरिके कन्हाई
तुरत सद्गति उसे दी बिन बिचारी॥५॥
सहस्रों तप किये नहिं ध्यान आवें
किये जप-दान-यज्ञों कर न पावें।
जती - जोगी न जिनकी पार पावें
न बन्धन कर सके श्रुतिवेद सारे॥६॥
तृणावर्त्त केशी वत्सासुर बकासुर
धेनुकासुर शकटासुर अघासुर।
पछाड़े खेल ही में सब निशाचर
हरे संताप व्रजजनके सब मुरारे॥७॥
हरे थे वत्स-बालक ब्रह्माने जब
लगाया ज्ञान-बल माया ठगी सब।
शरण आये भ्रमित मन-बुधि थकी तब
चतुर्मुख विनय कर निजपुर सिधारे॥८॥
भयानक नाग कालिय दह विचरता
विषैला जल सबोंके प्राण हरता।
सहस्रों फन-फन पर नृत्य करके
चमत्कार खेल रचाये प्रभु सारे॥९॥
किसीकी गोदमें रस-खीर खाते
किसी को नृत्य मोहन कर रिझाते।
किसीका रोक-मारग कर लगाते
किसीके नैनके बनते सितारे॥१०॥
किसीके चावसे गोधन चराते
किसीके माट-माखन फोड़ जाते।
किसीके हाथ क्या तुम कभी आते
अनोखे नटखटी हे कान्ह कारे॥११॥
न माखन सददही निजघरका भाया
चंचल कान्ह घर-घर जा चुराया।
सखाओंके सहित खाकर लुटाया
बने चितचोर माखन चोर प्यारे॥१२॥

किसीके कौर मुखसे छीन खाते
किसीको पीठ पर तुम हो चढ़ाते।
किसीके सारथी बन रथ हाँकते
सदा भक्तोंकी सेवा सुखसे करते ॥१३॥
किसीका मान करते पुत्र बनकर
किसीका मान करते शिष्य बनकर
किसीका मान रखते प्रण समझकर
सदा सम्मान कर जन-पद पखारे ॥२४॥
किसीके सीसकी मटुकी उचाते
किसीके चारु चरणोंको दबाते।
किसीके कर-कमल मेंहदी रचाते
किसीके हार बनते प्राण प्यारे ॥१५॥
कमरिया ओढ़ बन बनमें गौ चराते
अधर धर वेणु माधव सुर सुनाते
सखा सरवस्व जीवन धन लुटाते
अनूठे राग मोहन सब तुम्हारे ॥१६॥
मयूरी कूक करती थीं किलककर
मृगीगण हूक भरतीं थी पुलककर
बने थे मूक पशु-पक्षी निरखकर
हुए थे चल अचल देख प्राण प्यारे॥१७॥
मधुर गोपी जनोंका भाव पाकर
हरे पट चीर पाटम्बर चुराकर।
समर्पण सब किया निजको भुलाकर
मदनमोहन मदनके बाण मारे ॥१८॥
चलन चितवन तुम्हारी चित चढ़ी थी
हलीन डोलीन मुरलिका मन अड़ी थी
पगनकी पैंजनी धुन हिय अड़ी थी
अहि-निशि नाम रटती वे तुम्हारे ॥१९॥

कोई नन्द पौर जा लीला निरखतीं
कोई मिसकर महीर से जा अटकतीं
छबीलेकी छटा लखि मोद भरतीं
बसे नयनोंमें निशिदिन नन्द वारे ॥२०॥
तुम्हारे प्रेम रंगमें वे रंगी थीं
तुम्हारी ही लगन उनमें लगी थीं।
तुम्हारे रूप रसमें वे पगी थीं
तुम्हीं हो सत्य जीवन हे अधारे ॥२१॥
सगे सांचे सखा स्वामी गिरिधर
न तुमसे अन्य जगमें हे निठुर वर।
तुम्हीं पर वारती तनमन रसिकवर
मदनमोहन सजीवन - मेरे प्यारे ॥२२॥
लखी जिनने ताकी मुस्कयान छिनभर
दई मानो खींचके तरवार उर पर
भई निष्प्राण जानो खाई विषधर
मनो जल मीन डारी थल किनारे ॥२३॥
तुम्हारी मधुर मूरत मन बसी थी
तुम्हारे रूप मदमें वे थकी थीं।
तुम्हींको कुञ्ज-कुञ्ज पै पूछती थीं
विहँस कह बैठतीं-"हम हैं कृष्णप्यारे॥२४॥
हुईं जब प्रेममें पागल कुमारी
तजी उन लोक-मर्यादा सब सारी।
किस विधि निरख पावे श्रीबिहारी
भटकती दीन बन बनके सहारे ॥२५॥
सखि वृन्दे ! लखे कित हैं बिहारी
करे अति प्रीति तुम उर मालधारी
लखे हे मालती ! कहाँ हैं बिहारी
बता दो मल्लिके कहाँ सखा प्यारे ॥२६॥

(क्रमशः)

—श्रीरामेश्वरप्रसाद सक्सेना

सन्दर्भ-सार

(श्रीभक्ति-सन्दर्भ)

अभी तक भागवत-संदर्भके तत्त्व, भगवत्, परमात्म और श्रीकृष्ण-सन्दर्भके विषयमें आलोचना हो चुकी है। इन चारों सन्दर्भोंमें ब्रह्म, परमात्मा और भगवान्—ईश्वरके इन त्रिविध आविर्भावोंमें से भगवत्ताकी परम श्रेष्ठता दिखलाई गई है। सम्बन्ध वस्तु स्वयं भगवान श्रीकृष्ण हैं—यह भी निश्चित की जा चुकी है। जीव तत्त्व अनादिकालसे मायाके सम्पर्कमें पड़कर हरिसे विमुख हो गया है। जीवोंकी मायासे मुक्ति पानेका एकमात्र उपाय श्रीकृष्ण भक्ति है। उसी बातकी यहाँ आलोचना होगी।

आत्मवस्तु सब प्रकारसे चिन्मय है। अनात्मवस्तुमें आत्मभ्रम कर अधिकांश व्यक्ति आत्मविषयके अस्तित्वके बारेमें विश्वासरहित और अनुसन्धानरहित हो पड़ते हैं। परम कारुणिक श्रीमद्भागवत शास्त्रमें इस बातका सम्यक् प्रकारसे निराकरण किया है। अतएव श्रीमद्भागवतके श्रवण करने पर श्रोताओंके हृदयमें भगवान श्रीहरि जल्दी ही अवरुद्ध हो जाते हैं। किन्तु जब तक पापोंद्वारा हृदय मलिन रहता है, तब तक शास्त्रोंमें सत्यबुद्धि और सद्गुरुके प्रति सद्बुद्धि न होती। बहुत जन्मोंके सुकृतिके फलसे ही सत्संगकी प्राप्ति होती है और शास्त्र-श्रवणके द्वारा श्रीकृष्ण-पादपद्मोंमें प्रेम प्राप्त होता है। ब्रह्मवैवर्त्त-पुराणमें कहा गया है—

> यावत् पापैस्तु मलिनं हृदयं तावदेव हि।
> न शास्त्रे सत्यबुद्धिः स्यात् सद्बुद्धि सद्गुरौ तथा।
> अनेक-जन्म-जनित-पुण्यराशिफलं महत्।
> सत्संग-शास्त्र श्रवणादेव प्रेमादि जायते॥

श्रीप्रह्लादजीने दैन्य प्रकाश करते हुए कहा है—

> नैतन्मनस्तव कथासु विकुण्ठनाथ
> सम्प्रीयते दुरितदुष्टमसाधु तीव्रम्।
> कामातुरं हर्षशोकभयैषणार्त्तं
> तस्मिन् कथं तव गतिं विमृशामि दीनः॥
> (भा० ७।९।३९)

हे वैकुण्ठनाथ! आपके नाम-रूप-गुण-लीलादि कथा द्वारा मेरे मनमें सम्यक् प्रसन्नता नहीं होती। क्योंकि मेरा मन अत्यन्त दुःसहनीय हर्ष, शोक, भय और धनादि भावनाके द्वारा अत्यन्त पीड़ित है तथा पापदुष्ट और असहनीय कामातुर है। अतएव यह दीन-हीन व्यक्ति किस प्रकार आपका तत्त्व भली प्रकारसे विचार कर सकता है?

हरिविमुख जीव भगवन्मायाके प्रभावसे

स्थूलदेहके प्रति आत्मबुद्धि करता है या सूक्ष्म-देहके प्रति आत्मबुद्धि कर स्मृतिभ्रमको प्राप्त करता है। अद्वयज्ञान भगवत्तत्वसे पृथक् होकर द्वितीय वस्तुरूप मायामें अभिनिवेश होनेके कारण भेदबुद्धि प्राप्त कर भय द्वारा आक्रान्त होता है। यह भागवतके ११।२।३५ श्लोकमें वर्णित है—

भयं द्वितीयाभिनिवेशतः
स्यादीशादपेतस्य विपर्ययोऽस्मृतिः।
तन्मायया तो बुध आभजेत्तं
भक्त्यैकयेशं गुरुदेवतात्मा॥

अतएव श्रीगुरुपादपद्मसे अप्राकृत दिव्यज्ञान प्राप्त कर शुद्धभक्तिको एकमात्र अभिधेय जानने पर श्रीभगवद्भजन द्वारा मायासे छुटकारा मिलेगा। हरिविमुख जीवकी माया प्रभावसे ही स्वरूपकी भ्रान्ति होती है। उसी भ्रान्तिके कारण देहके प्रति आत्मबुद्धि होती है। उस समय उसे मृत्युका भय होता है। भगवान्‌की दुर्द्धर्ष मायासे छुटकारा पानेके लिए श्रीहरि पादपद्ममें शरणागति ही एकमात्र उपाय है। यह श्रीमद् भगवद्गीतामें कहा गया है—

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥

श्रीचैतन्यचरितामृत, मध्यलीला, बीसवें परिच्छेदमें कहा गया है—

इहाते दृष्टान्त जैछे दरिद्रेर घरे।
'सर्वज्ञ' आसि दुःख देखि पुछये ताहारे॥१॥
तुमि केने एत दुःखी:, तोमार आछे पितृधन।
तोमारे न कहिल, अन्यत्र छाड़िल जीवन॥२॥
सर्वज्ञेर वाक्ये करे धनेर उद्देशे।
ऐछे वेद-पुराण जीवे 'कृष्ण' उपदेशे॥३॥
सर्वज्ञेर वाक्ये मूलधन अनुबन्ध।
सर्वशास्त्रे उपदेशे, 'श्रीकृष्ण'—सम्बन्ध॥४॥
बापेर धन आछे, जाने, धन नाहि पाय।
सर्वज्ञ कहे तारे प्राप्तिर उपाय॥५॥
'एई स्थान आछे धन', बलि दर्शिले खुदिबे।
'भीमरुल-वरुली' उठिबे, धन ना पाइबे॥६॥
'पश्चिमे' खुदिबे, ताहां एक यक्ष' हय।
से विघ्न करिबे—धने हात न पड़य॥७॥
'उत्तरे' खुदिबे आछे कृष्ण 'अजगरे'।
धन नाहि पाबे, खुदिते गिलिबे सबारे॥८॥
पूर्वदिके ताते माटी अल्प खुदिते।
धनेर झारि पड़िबेक तोमार हातेते॥९॥
ऐछे शास्त्र कहे,—कर्म, ज्ञान, योग त्यजि'।
'भक्त्ये' कृष्ण वश हय, भक्त्ये तांरे भजि॥१०॥
अतएव 'भक्ति'—कृष्णप्राप्तिर उपाय।
अभिधेय 'बलि' तारे सर्वशास्त्रे गाय॥११॥

इस प्रकार भगवदितर विषयमें अभिनिवेश परित्याग कर अपने दृढ़ चित्त द्वारा भगवानकी सेवा करनी चाहिए। जीव भजनानन्दमें मग्न होकर नियमानुसार हरिनाम-ग्रहण, हरिकथा श्रवण, निर्बन्धानुसार प्रणामादि अङ्ग पालन करने पर संसारकी कारणरूपा अविद्याकी निवृत्ति होती है।

भजनीयत्व-विषय भगवानमें ये सभी कारण

वर्त्तमान हैं। वे अपने चित्तमें स्वयं वर्त्तमान हैं। वे आत्मा होनेके कारण सबके प्रिय हैं। प्रियकी सेवा सुखरूपा है। 'अर्थ' शब्द द्वारा सत्यका उद्देश्य है, अनात्माकी तरह मिथ्या नश्वर नहीं है। वे सर्वसद्गुणविशिष्ट हैं और 'अनन्त' होनेके कारण नित्य हैं। ऐसे शक्ति-विशिष्ट भगवानका भजन करना चाहिए, वे 'नियतार्थ' होनेके कारण निश्चलस्वरूप हैं। भक्त भगवानके अनुभवानन्दमें आनन्द मग्न होकर ही भजन करेंगे। वह भजन होने पर संसारके कारणरूपी अविद्याका नाश होता है। भक्ति द्वारा भजनकी बात बतलाई गई है। अतएव कर्म-ज्ञान-योगादिका निराकरण हुआ है। श्रीसूतजी कहते हैं—

स वै पुंसां परो धर्मो यतो भक्तिरधोक्षजे।
अहैतुक्यप्रतिहता ययात्मा सुप्रसीदति॥
(भा० १।२।६)

श्रीमद्भागवतके प्रारम्भमें शौनकादि ऋषियोंने पूछा—सर्वशास्त्रसार और जीवमात्रका ऐकान्तिक मंगलका क्या विषय है? उत्तरमें सूतजी कहते हैं—जिस धर्मके अनुष्ठान द्वारा अधोक्षज भगवानके प्रति भक्ति हो, वही एकमात्र कल्याणजनक और जीवमात्रका परमधर्म है। भक्ति कैसी है? अहैतुकी और अप्रतिहता अर्थात् हेतुरहिता है। कामनाकी इच्छासे अनुष्ठित होने पर सहेतुक है। अतएव उस हेतुकी निवृत्ति होने पर वह अप्रतिहता हो जायगी। एकमात्र अव्यभिचारिणी भक्तिद्वारा भजन करनेकी बात कही गई है। अतएव कर्म-ज्ञान-योगादिका अनादर किया गया है। एकमात्र श्रवण-कीर्त्तनादि लक्षणा साक्षात् अविमिश्रा भक्तिद्वारा ही भजन करना चाहिए—यही बात कही गई है।

धर्म दो प्रकारका है—प्रवृत्ति और निवृत्ति भेदसे भोगपर और भगवत्पर। जीवके ऐकान्तिक-मंगलकी जिज्ञासाके फलसे भोगपर धर्मको 'अपर' और भगवत्पर धर्मको 'पर' धर्म कहा गया है। वह परधर्म अहैतुकी अर्थात् अनात्म-देह और मनकी कामतृप्तिरूप फलाभिसन्धानरहित है। परधर्म अन्याभिलाष, ज्ञान या कर्मादि द्वारा बाधाप्राप्त नहीं होता। परधर्मका बाधक अभक्ति भोगपर प्रवृत्तिमूला है। भगवान अधोक्षजकी अहैतुकी नित्यभक्तिरूप परधर्मद्वारा ही आत्मा सुप्रसन्न होती है। वही जीवमात्रका परम धर्म है। वही पंचम पुरुषार्थ रूप कृष्ण-प्रेम है। श्रवण-कीर्त्तनादिरूपा भक्ति अपक्वावस्थामें साधन भक्ति और परिपक्वावस्थामें प्रेमभक्ति कहलाती है। अपर धर्मका सम्यक् प्रकारसे पालन करने पर भी अधोक्षजकी भक्तिके बिना फल प्राप्त नहीं होता। अतएव व्यतिरेक और अन्वय रूपसे भक्तिरूप परधर्म ही सर्वशास्त्रसार और ऐकान्तिक मंगलका आधारस्वरूप है। भली प्रकारसे अनुष्ठित धर्म द्वारा यदि भगवान हरिका प्रीति-विधान हो, तब ही ऐसे धर्मकी संसिद्धि या फलप्राप्ति होती है। इस कथन द्वारा भगवानके प्रीति-विधानके

लिए अनुष्ठित धर्म ही श्रेष्ठ है, यह दिखलाया है। 'पर' शब्द द्वारा सबकी अपेक्षा उपादेय अर्थ है, केवल निवृत्तिमात्र लक्षणविशिष्ट नहीं। इस प्रसङ्गमें नारदजी कहते हैं—

नैष्कर्म्यमप्यच्युत भाववर्जितं
न शोभते ज्ञानमलं निरंजनम्।
कुतः पुनः शश्वदभद्रमीश्वरे
न चार्पितं कर्म यदप्यकारणम्॥
(भा० १।५।१२)

कर्मरहित केवल विशुद्ध ज्ञान भी जब विष्णु भक्तिरहित होने पर शोभा नहीं पाता, तब वहाँ दुःखरूप प्रवृत्तिपर अभद्र या अशुभ कर्म किस प्रकार साधनकाल और फलकाल में शोभा पा सकता है? इसकी बात तो दूर रहे, निवृत्तिपर कर्म यदि भगवान को अर्पण न किया जाय, उसकी भी सफलता नहीं है। अर्थात् वह निरर्थक है।

अतः पुंभिर्द्विजश्रेष्ठा वर्णाश्रम-विभागशः।
स्वनुष्ठितस्य धर्मस्य संसिद्धिर्हरितोषणम्।
(भा० १।२।१३)

अतएव हे द्विजिश्रेष्ठगण! वर्णाश्रम-विभाग पूर्वक उत्तमरूपसे उसे पालन करने पर भी हरितोषणरूप कामनारहित हो और तुच्छ-फलदृष्टियुक्त हो, तो वह अतीव अयुक्त है। अतएव भक्ति ही ऐकान्तिक कल्याणजनक परधर्म है। इस श्लोक द्वारा भक्ति वर्णाश्रमादि कर्म-ज्ञान-मिश्र धर्मसे श्रेष्ठ है, यह बात कही गई है। भक्तिका स्वरूप इस प्रकार वर्णित है—स्वयं सुखरूपा होनेके कारण अहैतुकी, हरितोषण व्यतीत अपर फलानुसन्धानरहित है। अप्रतिहत शब्द द्वारा उसको छोड़कर सुखदुःख पदार्थ की स्थिति न होनेके कारण दूसरे किसी कारण द्वारा बाधा प्राप्त नहीं हो सकती। रुचि लक्षणा भक्तिके उदित होनेपर उस जातरुचि भक्त व्यक्तिसे श्रवणादि लक्षणविशिष्ट भक्तियोगका अनुष्ठान होता है।

जड़ जगतके प्राणीमात्रकी इन्द्रियाँ ही ज्ञान प्राप्त करनेके यंत्र स्वरूप हैं। जीव भगवद्-विमुख होकर जड़ेन्द्रियद्वारा भोग्यवस्तु अपनेको भोक्ता भगवान समझता है। भोगपर जड़ीय अक्ष या इन्द्रियद्वारा चेतनकी क्रिया ही अक्षज अर्थात् इन्द्रियजात भोग्य है। किन्तु भगवान कदापि अणुचित् जीवके इन्द्रियगम्य वस्तु नहीं हैं। वे जड़ातीत अनन्त हैं और जीवकी जड़ेन्द्रियोंसे अतीत वस्तु हैं। जीवका अक्षज ज्ञान भगवानकी सेवा करनेके बदलेमें भोगायतन वस्तुका प्रभुत्व ज्ञान पैदा करता है। अधोक्षज वस्तु कदापि भोक्ताभिमानी जीवकी भोग्यवस्तु नहीं हो सकती। जीवोंकी जड़ेन्द्रियाँ जड़ीय वस्तुके भोक्ता हैं। जीव यदि भोगमयी धारणा का परित्याग करें, तब ही अधोक्षजकी सेवा कर सकता है। रुचिमूला भगवत्सेवाके बिना प्रभु भगवान और उनके सेवक वैष्णवोंकी प्रसन्नताकी सम्भावना नहीं है। नित्यसेवककी नित्य सेवा ही परमधर्म है।

त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिसुदेव श्रौती महाराज

माननीया श्रीमती महालक्ष्मी देवीका परलोकगमन

हम अत्यन्त विरह-व्यथित होकर पाठकों-को यह अवगत कराते हैं कि वैष्णव जगतकी एक महान् आदर्श महिला श्रीमती महालक्ष्मी विश्वास गत १० नारायण, २८ अग्रहायण १४ वीं दिसम्बर १९६८, शनिवार प्रातः काल ६·१० मिनिटमें उनके लिलुयामें वर्त्तमान गृहमें श्रीहरिनाम कीर्त्तन करती हुई और वैष्णवोंके श्रीमुखसे हरिनामका श्रवण करती हुई इस मर्त्यलोकका परित्याग कर परलोकमें पधारीं। वे अस्मदीय श्रीश्रील गुरुपादपद्म श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके प्रतिष्ठाता सभापति नित्य-लीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीलभक्ति प्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजकी श्रीचरणा-श्रिता शिष्या थीं। पहले दिन वे अत्यन्त अस्वस्थ होने पर भी अपने श्रीगुरुपादपद्मकी बात चिन्ता कर रहीं थीं। परमाराध्यतम श्रीश्रीलगुरुदेवके नित्यलीला-प्रवेशके कारण अत्यन्त व्यथित थीं। उन्होंने अपने सतीर्थ गुरुभ्राताओंके दर्शनके लिए अत्यन्त व्याकुलता प्रकट की। उनका ऐसा भाव देखकर उनके सुपुत्रोंने श्रीधाम नवद्वीपस्थ श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें सम्वाद भेजा। सम्वाद पाकर समितिके नवनिर्वाचित सभापति - आचार्य पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिवेदान्त वामन महाराज, गौड़ीय पत्रिकाके सम्पादक पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिवेदान्त त्रिविक्रम महाराज और ८-१० ब्रह्मचारीवृन्द उनके वासस्थानमें पधारे। श्रीमती महालक्ष्मी देवीकी प्रार्थनासे सभी वैष्णवोंने श्रीहरिनाम संकीर्त्तन आरम्भ किया। सारा रात नामकीर्त्तन होता रहा। सूर्योदयके कुछ समय पूर्व जब पूर्व दिशा में लालिमा छाई हुई थी, उसी समय श्रीमती महालक्ष्मी देवी अत्यन्त व्याकुलताके साथ 'कृष्ण-कृष्ण' उच्चारण करती हुईं अपने स्वधाममें पधारीं। इसके पश्चात् उनके दिव्य कलेवरको उनके पुत्रोंने पुष्प-माल्य और चन्दन से सुसज्जित कर गङ्गातीरमें लाये। वहाँ श्रीहरिनाम-संकीर्त्तनके माध्यमसे उनका शेष कृत्य सम्पन्न किया गया।

२४ दिसम्बर, मंगलवारके दिन कांकिनाडा में स्थित उनके ज्येष्ठ पुत्रके वासस्थान पर श्रीश्रील गोपालभट्ट गोस्वामीकृत श्रीसत्क्रिया-सार-दीपिकाके अनुसार उनका पारलौकिक श्राद्ध सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर समितिके सदस्यवर्ग ने उपस्थित होकर यह कार्य अत्यन्त निपुणताके साथ सम्पन्न किया। इस समय एक महान् उत्सवका आयोजन किया गया,

जिसमें हजारों व्यक्तियोंने श्रीमहाप्रसादकी सेवा की। उक्त दिन अपराह्णको एक सभाका आयोजन किया गया, जिसमें श्रीमती महालक्ष्मी देवीके श्रीहरि-गुरु-वैष्णव-सेवावैशिष्ट्य के सम्बन्धमें आलोचना की गई।

सन् १९४९ सालमें श्रीमती महालक्ष्मी देवी श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति द्वारा आयोजित श्रीधाम नवद्वीप-परिक्रमामें सामिल होनेके लिए श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें उपस्थित हुईं। उन्होंने सहस्रों भक्तोंके साथ श्रीधाम नवद्वीप की परिक्रमा की। समितिके सेवकोंके श्रीमुखसे प्रचुर हरिकथा सुनकर और उनका सेवा-नैपुण्य देखकर वे अत्यन्त आकृष्ट हुईं। इसके पश्चात् वे समितिके साथ अपना सम्बन्ध बढ़ाते हुए प्रायः ही मठमें आया-जाया करती थीं। इसी अवसर पर उनके पुत्र श्रीअमलेन्दु विश्वास मठमें योगदान करने लगे। इसके द्वारा उनका मठके साथ सम्बन्ध और भी घनिष्ट हो गया। सन् १९५१ में उन्होंने अस्मदीय श्रीलगुरुपादपद्म आचार्यकेशरी नित्यलीला-प्रविष्ट ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रील भक्तिप्रज्ञान केशव महाराजसे विधिपूर्वक दीक्षा-मन्त्र ग्रहण किया। उनके साथ-साथ उनके पुत्र श्रीअमलेन्दु विश्वासने भी दीक्षा ग्रहण की थी।

वर्त्तमान समयमें उनके छः पुत्र, तीन कन्याएँ और पति—सभी वर्त्तमान हैं। प्रत्येक पुत्र ही स्वावलम्बी और उदारप्रवृत्तिपरायण हैं। उनके सबसे कनिष्ठ पुत्र डा. विमलेन्दु विश्वास एम. बी. बी. एस. (कलकत्ता), एम. एस. (दिल्ली) अत्यन्त सुयोग्य चिकित्सक हैं। वे दिल्लीके सफ्तरजङ्ग अस्पतालके Surgical Department के प्रधान अधिकर्त्ताके रूपमें नियुक्त हैं। वे उच्च शिक्षा प्राप्त करनेके लिए (एफ. आर. सी. एस.) लण्डन जायेंगे। वैष्णवोंके प्रति उनकी अकृत्रिम श्रद्धा और अमायिक व्यवहार आदर्शस्थानीय हैं। श्रीमती महालक्ष्मी देवीकी भक्तिप्रवणता उनके प्रत्येक सन्तानमें ही गहरे रूपसे प्रतिफलित है। सत् सन्तान पाकर उन्होंने परम सौभाग्य प्राप्त किया है।

उनके जीवनमें श्रीहरि - गुरु-वैष्णवकी सेवाकी तीव्र आकांक्षा थी। वे सर्वदा ही सेवा-चिन्तामें मग्न रहती थीं। उनके दैहिक खर्चके लिये उनके स्वामी और सन्तानादि जो कुछ अर्थ देते, उसमें से अपने लिए केवल थोड़ासा ग्रहण कर बाकीका संग्रह करती थीं और उसे श्रील गुरुदेवके पास पहुँचा देती थीं। शरीर नानाप्रकारसे अस्वस्थ रहने पर भी वे प्रगाढ़ निष्ठाके साथ भगवद्भजनमें तन्मय रहती थीं। इतर कार्योंसे सर्वदा दूर रहकर सांसारिक जीवन-निर्वाह और हरिनामके सेवनमें लगी रहती थीं। सन् १९६६ सालमें जब परमाराध्यतम श्रीश्रील गुरुदेव उर्ज्जाव्रत के उपलक्ष्यमें श्रीधाम नवद्वीपसे श्रीधाम वृन्दावनके लिए यात्रा कर रहे थे, उस समय उन्होंने श्रीदेवानन्द गौड़ीय मठमें निर्मित विशाल श्रीमन्दिरके

शिखरपर एक विशाल घण्टा स्थापन करनेके लिए एक हजार रुपये दिए। उनके उसी अर्थसे प्राय: २ मन वजनका एक विराट घण्टा नवद्वीपस्थ श्रीमन्दिरके ऊपर स्थापित किया गया। आज भी उस घन्टेकी अपूर्व ध्वनि श्रीधाम नवद्वीपके दिक्‌विदिक्‌को मुखरित कर रही है। उन्होंने नगाड़ा भी एक दिया है। इसके अलावा उन्होंने जो बहुमुखी सेवाएं की हैं, उनकी कोई तुलना नहीं है। समितिके सदस्यवर्ग उनकी सेवासे अत्यन्त प्रसन्न हैं। उनका जीवन आलोचना करने पर यह जाना जाता है कि गृहमें रहकर भी श्रीहरि-गुरु-वैष्णव सेवा की संभावना है। उनका आदर्श जीवन प्रत्येक भक्तिमती नारीके लिए ही ग्रहणीय है। उनकी भक्ति और सेवादर्शसे अनुप्राणित होकर उनके परिवारके सदस्य भी भगवत्-कृपा प्राप्त करनेकी चेष्टा करें—यही हमारी हार्दिक इच्छा है। श्रीमती महालक्ष्मी देवीके परिवारके सदस्योंको हमारी हार्दिक समवेदना और सान्त्वना देते हुए यह वक्तव्य समाप्त करते हैं।

—अनंत विरही

यदि गौरचन्द्र न आते

जो पै नहिं गौरचन्द्र जग जाते।
तो ये दीन अधम जन हमसे, सिर धुनि धुनि पछताते॥
होती कहा दशा पतितन की, शरन कौनकी जाते।
साधन हीन मलिन जनन को, मारग कौन बताते॥
रस रहस्य राधामाधवको, आय कौन प्रगटाते।
सुर दुर्लभ हरि नाम प्रेम रङ्ग, को जगमें बरसाते॥
पाखण्डी कुतर्की जननको, कौन भक्ति पथ लाते।
'सूरज' ऐसे अधमा जन को, और कौन अपनाते॥

प्रचार-प्रसङ्ग

उत्तर बंगाल और आसाममें प्रचार

श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके वर्त्तमान सभापति-आचार्य त्रिदंडिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्ति-वेदान्त वामन महाराज अपने साथ त्रिदंडि-स्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त न्यासी महाराज, श्रीमुरलीमोहन ब्रह्मचारी, श्रीस्वाधिकारानन्द ब्रह्मचारी, श्रीगोवर्द्धन ब्रह्मचारी, श्रीशिवानन्द ब्रह्मचारी और श्रीधनञ्जय दासाधिकारीको लेकर गत २।४।६९ को श्रीधाम नवद्वीपसे रवाना होकर सर्वप्रथम रायगंज पहुँचे। वहाँ सबसे पहले श्रीकृष्णप्रसाद दासाधिकारीके जामाता श्रीहरिगोपाल चौधरीके गृहमें ७ दिनों तक भागवत-पाठ और हरिसंकीर्त्तन हुआ। उसके पश्चात् डॉ० सुधांशु कुमार सरकारके गृहमें ३ दिन भागवत-पाठ और कीर्त्तन और सबसे अन्तमें श्रीकृष्णप्रसाद दासाधिकारीके गृहमें २ दिन भागवत-पाठ और कीर्त्तन हुआ। फिर वहाँसे शिलिगुड़ीके लिए प्रस्थान किया।

शिलिगुड़ीमें श्रीयुत अचिन्त्यगौर दासाधिकारीके गृहमें ४ दिन श्रीभागवत-पाठ और छायाचित्रके साथ वक्तृता की गई। शक्तिगढ़ कॉलोनीमें श्रीयुत धरणीधर दासाधिकारीके गृहमें १ दिन भागवत-पाठ और छाया-चित्र द्वारा वक्तृता सम्पन्न हुई। उन्हींके उत्साह और चेष्टासे श्रीशैलन्द्र वाचनालय और क्लबमें १ दिन भागवत-पाठ और छायाचित्र द्वारा वक्तृता तथा सनातन धर्मके सम्बन्धमें भाषण हुआ। उसके पश्चात् श्रीयुत अमूल्यचरण दत्त के गृहमें भागवत-पाठ और छायाचित्र द्वारा वक्तृता, श्रीयुत विधुभूषण देके गृहमें भागवत-पाठ और वक्तृता (छायाचित्र द्वारा), श्री सुधीरकुमार घोषके गृहमें भागवत-पाठ और छायाचित्र द्वारा वक्तृता, श्रीफणीभूषण घोष के गृहमें भागवत-पाठ और अन्तमें श्रीकुमारी आरतिरानी दत्तके गृहमें भागवत-पाठ और छायाचित्र द्वारा वक्तृता हुई। इसके पश्चात् शिलिगुड़ी कॉलेजमें "जड़-विज्ञान, निरीश्वर शिक्षा और सनातन धर्म"के सम्बन्धमें तुलना-मूलक भाषण हुआ। वहाँके Government Employees' Association में एक दिन भागवत पाठ और वक्तृता हुई।

३०।४।६९ को वहाँसे रवाना होकर माथा-भाङ्गा पहुँचे। वहाँ १५-२० दिनों तक भागवत-पाठ और कीर्त्तनादि हुए। उसके पश्चात् वहाँ से १० मील दूरी पर स्थित शीतलकुचीमें प्रचार हुआ। वहाँसे प्रचार पार्टी दीनहाटा पहुँची। वहाँ १०-१२ दिन प्रचार कर कुच-

बिहार होते हुए गोलोकगंज जायगी। वहाँ कुछ दिनों तक प्रचार कर धूबडी, बंगाइगाँव, आदि होती हुई वासुगाँव पहुँचेगी और वहाँसे श्रीधाम नवद्वीप प्रस्थान करेगी।

उत्तर आसाममें प्रचार

श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके अन्यतम प्रचारक त्रिदंडिस्वामी श्रीभक्तिवेदान्त पर्यटक महाराज श्रीश्यामगोपाल ब्रह्मचारी, श्रीभक्त-यांघ्रिरेणु ब्रह्मचारी, श्रीश्रीदाम ब्रह्मचारी और श्रीशुक्लाम्बर ब्रह्मचारीको साथ लेकर स्वयं भगवान श्रीश्रीगौराङ्ग महाप्रभुकी आचरित और प्रचारित शुद्धा वाणी प्रचार करनेके लिए श्रीधाम नवद्वीपसे रवाना होकर गत १६ मार्च को आसामकी राजधानी शिलांगमें उपस्थित हुए। २२ मार्चको सायंकालमें श्रीयुत हनुमान-बक्स मोतीलालके पुलिस बाजारस्थ भवनमें श्रीमहाजन पदावलीके कीर्त्तनके पश्चात् छाया-चित्र द्वारा श्रीश्रीराधाकृष्ण-लीलाका प्रदर्शन कर श्रीकृष्णके परमतत्व और सर्वावतारी होने का शास्त्रीय प्रमाण द्वारा भाषण दिया गया। यह भाषण प्राञ्जल हिन्दी भाषामें दिया गया। २८ मार्चको स्थानीय लोअर मप्रेम रोड़के हिन्दु-मिशन अनाथ आश्रम हाईस्कूलमें छायाचित्र द्वारा 'भक्त प्रहलाद'की जीवनी आलोचना करते हुए सरल बंगला भाषामें भक्तराज श्रील प्रहलाद महाराज किस प्रकार हजारों बाधाओं के उपस्थित होने पर भी अपने हरिभजनमें दृढ़ थे और उन्होंने क्या शिक्षाएँ दी थीं—इस पर विशदरूपसे प्रकाश डाला गया। भाषण सुनकर शिक्षक, छात्र और गण्यमान्य सज्जन-गण अत्यन्त आनन्दित हुए और भक्तिपथके प्रति श्रद्धा प्रकट करने लगे। २६ मार्चको लावानस्थ श्रीहरिसभा मण्डपमें श्रीमद् भाग-वत-पाठ और व्याख्या कर कर्म, ज्ञान, और योगका हेयत्व-शास्त्र प्रमाणों द्वारा दिखलाकर श्रीहरिसंकीर्त्तनका माहात्म्य और सर्वश्रेष्ठत्व का प्रतिपादन किया गया। ३० मार्चको स्था-नीय उम्पलिंग नामक स्थानके श्रीयुत जयशंकर भट्टाचार्यके वासस्थानमें श्रीमद्भागवतसे श्रील अम्बरीष महाराजकी ऐकान्तिक भगवन्निष्ठा की बातसे श्रोताओंको भक्तिकी महिमा की ओर आकृष्ट किया गया। इसके पश्चात् ३१ मार्च और १ अप्रेलको स्थानीय रिलवंग पूजा-मण्डपमें श्रीमद्भागवत-पाठ और छायाचित्र द्वारा श्रीश्रीमन्महाप्रभुजीकी लीला प्रदर्शन करते हुए अचिन्त्यभेदाभेद तत्त्व और श्रीमन् महाप्रभुजीके औदार्य-वैशिष्ट्य पर सुन्दर रूपसे प्रकाश डाला गया।

इसके अलावा पल्टन बाजारस्थ श्रीयुत सीताराम ओमप्रकाश, लावानस्थ श्रीयुत सतीशचन्द्र पुरकायस्थ, श्रीयुत अनिल कुमार

पाल, कैंचेश स्टेशनके श्रीनीरोदरञ्जन सेन और आसाम गवर्नमेन्टके बाढ़नियंत्रण विभागके अण्डर सेक्रेटरी श्रीयुत हेमेन्द्रकुमार काकती आदि सज्जनोंके वासस्थानोंमें विभिन्न दिन पाठ-कीर्त्तन-वक्तृता द्वारा प्रायः तीन सप्ताह तक शिलांग शहरमें श्रीश्रीगौरवाणीका प्रचार हुआ। वहाँसे प्रचार पार्टी करिमगंज उपस्थित हुई। वहाँ कुछ दिन प्रचार कर डिब्रुगढ़ शहर में काफी दिनों तक प्रचार हुआ। वर्त्तमान समयमें प्रचार पार्टी तिनसुखिया शहरमें प्रचार कर रही है।

---

२४ परगना और सुन्दरवनमें प्रचार

श्रीगौड़ीय वेदान्त समितिके अन्यतम प्रचारक त्रिदंडिस्वामी श्रीमद् भक्तिवेदान्त त्रिदंडि महाराज श्रीकानाईलाल ब्रह्मचारी, श्रीकृपासिन्धु ब्रह्मचारी, श्रीगोविन्द ब्रह्मचारी, श्रीचिन्मयानन्द ब्रह्मचारी और श्रीनयनानन्द दासाधिकारी आदिको लेकर २४ परगनाके कृष्णचन्द्रपुर, काशीनगर आदि स्थानोंमें प्रचार प्रारम्भ किया। काशीनगरके निवासी माननीय श्रीसनातन दासाधिकारीके गृहमें ८-१० दिनों तक भागवत-पाठ और कीर्त्तनादि सम्पन्न हुए। उस अवसर पर वहाँ विराट् प्रदर्शनी और मेला होती है। वहाँसे रवाना होकर मईपीठ अञ्चलमें १५ दिनों तक तुमुल प्रचार हुआ। वहाँसे गिलारछाट पहुँचे। वहाँ प्रचार कर गम्भीरनाद, डायमण्ड हारबर एवं उसके निकटवर्त्ती उस्ति गाँवमें प्रचार पार्टी पहुँची। वहाँ कुछ दिन रहकर प्रचार करनेके पश्चात् अब प्रचारकगण सागरद्वीप होकर अन्यान्य नये-नये स्थानोंमें प्रचार कर रहे हैं।

—जनैक संवाददाता

रे मन ! गौर-गौर नित गइए

रे मन ! गौर-गौर नित गइए।
जिनके गौर प्राण धन सरबस, तिनके पद सिर नइए।
जो जन गौरचन्द्र यश गावत, तिनकी बलि-बलि जइए॥
जो गौराङ्ग को ध्यान धरत हैं, तिनहींके सङ्ग रहिये।
'सूरज' श्रीगौराङ्ग भक्त तज, अन्ते कबहुँ न जइए॥

पाश्चान्य देशोंमें श्रीश्रीचैतन्य वाणीका प्रचार

[नित्यलीलाप्रविष्ट जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रील भक्ति सिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके कृपाप्राप्त पूज्यपाद त्रिदण्डिस्वामी श्रीश्रीमद् भक्तिवेदान्त स्वामी महाराज गत ३-४ वर्षोंसे संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, कनाड़ा, इग्लेंड आदि देशोंमें श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुकी वाणीका प्रचार कर रहे हैं। इस कार्यमें उन्होंने बहुत सफलता प्राप्त की है। सम्भवतः आज तक विदेशोंमें भारतसे जितने भी धर्म-प्रचारक लोग गए हैं, शायद उनमेंसे किसीने ही ऐसी सफलता प्राप्त की हो। उन्होंने मथुराके पते पर एक पत्र प्रेरण किया था। उसीका यहां विवरण दिया जा रहा है।]

अब तक निम्नलिखित स्थानोंमें पूज्यपाद स्वामीजी महाराजने प्रचार केन्द्र स्थापित किये हैं—(१) New York, (२) San Francisco, (३) Los Angeles, (४) London (इग्लैंड) (५) Hamburg (जर्मनी का एक प्रमुख नगर), (६) Honolulu (हवाय द्वीपमें), (७) Seattle, (८) Santa Fe, (९) Vancouver (कनाड़ा), (१०) Toronto (कनाड़ा), (११) Montreal (कनाड़ा), (१२) Boston, (१३) Buffalo, (१४) North Carolina, (१५) Columbus, (१६) Florida और (१७) New Vrindaban (West Virginia)

और भी नये नये प्रचार-केन्द्र स्थापित किये जा रहे हैं। पूज्यपाद स्वामीजी महाराज ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका के New Virginia नामक स्थान में ३०० बीघा जमीन खरीदा है, जहां वे New Vrindaban' स्थापन करना चाहते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से प्रकाशित "Back to Godhead" नामक मासिक पत्रिका, जिसके पूज्यपाद स्वामीजी महाराज सम्पादक हैं, २०००० प्रतियोंमें छप रही है। हॉल ही में उन्होंने श्रीमद् भगवद्गीताका अंग्रेजी संस्करण प्रकाशित किया है, जिसके ५०००० प्रतियां छप चुकी हैं। उन्होंने और भी कुछ ग्रन्थ लिखे हैं यथा—(१) Teachings of Lord Chaitanya, (२) Nector Devotion, (३) Sri Krishna आदि।

प्रत्येक शहरमें ही जहां उनके प्रचार केन्द्र हैं, विपुल हरिकीर्त्तन हो रहा है। प्रत्येक शहरमें प्रचुर भिक्षा आदि प्राप्त हो रहे हैं और प्रत्येक सप्ताहके अन्तमें एक विराट महोत्सव मनाया जाता है। लण्डन शहरमें विराट संकीर्त्तनादि का आयोजन चल रहा है। वहां एक विराट मन्दिर स्थापना करनेका प्रयास चल रहा है। उनके शिष्य वर्गमें अधिकांश ही नवयुवक-नवयुवतियां हैं। उनके माता-पिता उन्हें पागल

समझने पर भी अत्यन्त उत्साहके साथ इस मार्गको ग्रहण कर रहे हैं।

श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभुने कहा था—

पृथिवीते आछे जेत नगरादि ग्राम।
सर्वत्र प्रचार हइबे मोर नाम॥

अर्थात् पृथिवीमें जितने भी नगर-ग्राम आदि हैं, सर्वत्र ही मेरे द्वारा प्रचारित कृष्णनाम और हरिसंकीर्त्तनका प्रचार होगा। इस भविष्य वाणीकी सार्थकता इस प्रचार-कार्यमें देखी जा रही है। आशा है कि शीघ्र ही विदेशवासी व्यक्ति हमारे सनातन धर्ममें प्रवेश करनेके लिए बाध्य होंगे और एक समय में भारतवर्षकी जो उज्ज्वलकीर्त्ति पताका सर्वत्र फहरा रही थी, पुनः सारे भूमण्डल पर फहरायेगी। हमारे सनातन धर्म के विचारोंको ग्रहण कर उनका मानव जीवनमें निष्कपट रूपसे पालन करने पर ही जगतमें वास्तविक शान्ति और आनन्दकी प्राप्ति हो सकेगी। वर्त्तमानमें पाश्चात्य देशोंकी विचार-प्रणाली सम्पूर्ण भ्रान्तिजनक और जड़वादकी घोर परिणति है। उसके द्वारा वास्तविक शान्ति और सुख कदापि पाये नहीं जा सकते। खेदकी बात है कि वर्त्तमान समयमें हमारी पुण्यभूमि भारतवर्षमें पाश्चात्य देशोंका अन्धाधुन्ध नकल किया जा रहा है और उसके परिणामादि पर विचार किया नहीं जाता। आशा है कि भारत के तथाकथित विद्वान् और श्रेष्ठ व्यक्ति इस विषय पर यथार्थ रूपसे विचार करेंगे और भारतवर्षकी नवीन पीढ़ीको अन्धकूपमें न डालेंगे। अधिक क्या, पाठकवर्गसे हमारा नम्र निवेदन है कि वे श्रीभगवद्वाणीके प्रचार-कार्यमें हमें और भी उत्साहित करें। प्राण, अर्थ, मन और बुद्धि द्वारा इस महान् कार्यमें हमारी सहायता कर श्रीश्रीचैतन्य महाप्रभु द्वारा वितरित अमूल्य प्रेम-निधिके अधिकारी बनें।

—सम्पादक